International Journal of Sanskrit Research 2017; 3(1): 137-141

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2017; 3(1): 137-141
© 2017 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 19-01-2017
Accepted: 21-02-2017

डॉ. टेकचन्द मीणा
सहायकाचार्य, संस्कृत–विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत

Corresponding Author:
डॉ. टेकचन्द मीणा
सहायकाचार्य, संस्कृत–विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत

छन्दःसमीक्षा में मर्मचिन्ता : गणों पर आधारित लक्षण पद्धति की सीमाएँ

डॉ. टेकचन्द मीणा

प्रस्तावना

वेदार्थज्ञान में साक्षात् उपकारक छः वेदाङ्गों में छन्दस् का अन्यतम स्थान है [1]। छन्दःशास्त्र की आचार्य परम्परा में पिङ्गल, भरत, केदारभट्ट, हेमचन्द्र, गङ्गादास आदि के ग्रन्थों की महत्ता सुज्ञात है। छन्दःशास्त्र के अन्तर्गत छन्दःशिक्षा, छन्दोगणित, छन्दोनिरुक्ति, पञ्चाङ्गतावाद तथा छन्दःकल्प आदि प्रमुख–विषयों का विवेचन किया जाता है। उक्त विषयों की समीक्षा पं. मधुसूदन ओझा ने अपने ग्रन्थ *छन्दःसमीक्षा* में की है। उक्त ग्रन्थ में छन्दःकल्प के पांच विषयों के अन्तर्गत मर्मचिन्ता का विवेचन किया गया है।

संस्कृत छन्दों के पारस्परिक संरचनात्मक अन्तःसम्बन्ध को जानना अत्यन्त कठिन कार्य है। छन्दों की गणीय व्यवस्था की यह अल्पता है कि दो (स्वल्पभेद वाले) छन्दों के मध्य विवेक करने में कठिनाई होती है। इस विषय को शास्त्रीय दृष्टि से विचारने का कार्य "छन्दोमर्म चिन्तन" कहलाता है। छन्दों की पारस्परिक संरचनात्मक समानता के कारण अनेक बार कुछ अक्षरों में स्वल्प परिवर्तन (आवाप–उद्वाप) करने मात्र से ही एक छन्द दूसरे समान छन्द में परिणत हो सकता है। इस प्रवृत्ति के कारणों पर विचार करने को (छन्दों की) मर्मचिन्ता कहते हैं।

छन्दशास्त्र में दो प्रकार के ग्रन्थों की परम्परा प्राप्त होती है –

१. गद्यात्मक सूत्र शैली में निबद्ध ग्रन्थ– जैसे पिङ्गलकृत छन्दःसूत्र में छन्दों का लक्षण करते समय सीधे सीधे उसके गणों का निर्देश कर दिया गया है यथा– चित्रपदा भौ गौ [2] इत्यादि ।

२. पद्यात्मक शैली में निबद्ध ग्रन्थ – पद्यात्मक लक्षण ग्रन्थ भी दो प्रकारों में विभक्त किये जा सकते हैं–

क) गणानुसारी– गण में तीन अक्षर होते हैं, वे लघु या गुरु होने के कारण एक दूसरे से भिन्न होते हैं। गण आठ होते हैं– यमाताराजभानसलगाः।

संस्कृत छन्दःशास्त्र परम्परा के कतिपय ग्रन्थ ऐसे हैं, जिनमें छन्दो का लक्ष्य–लक्षण निर्देश गणों के माध्यम से किया गया है उदाहरण यथा– स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ गः [3]। वृत्तरत्नाकर एवं छन्दोमञ्जरी इसी प्रकार के ग्रन्थ हैं।

ख) अक्षरानुसारी– छन्द के एक पाद में विद्यमान लघु तथा गुरु अक्षरों के क्रमनिर्देश द्वारा छन्दों का लक्षण (और कतिपय ग्रन्थों में उदाहरण भी) प्रस्तुत करने वाले ग्रन्थ इस कोटि में आते है यथा– *नाट्यशास्त्र*, *श्रुतबोध*, *रत्नमञ्जूषा*, *छन्दोऽनुशासन* आदि। इनमें से श्रुतबोधादि ऐसे हैं जो छन्दोविशेष का मञ्जुल उदाहरण भी साथ में संगुम्फित कर देते हैं

श्रुतबोध में छन्दोनाम तथा उसका लक्षण लघुगुरु–पद्धति से किया है इसका वैशिष्ट्य यह है कि प्रदत्त– लक्षण उदाहरण भी है। यथा–

---

[1] छन्दः पादौ तु वेदस्य, पा.शि.४

[2] पिङ्गलछन्दःसूत्र ६.५

[3] वृत्तरत्नाकर ३.३० तथा छन्दोमञ्जरी २.४१

यस्यां त्रिषट्सप्तममक्षरं स्याद्ध्रस्वं सुजङ्घे नवमं च तद्वत्।
गत्या विलज्जीकृतहंसकान्ते! तामिन्द्रवज्रां ब्रुवते कवीन्द्राः।। [4]

छन्दों का विभाजन वार्णिक तथा मात्रिक के रूप में किया गया है। वर्णवृत्त या वार्णिक छन्द एकाक्षर पाद से प्रारम्भ होकर छब्बीस पाद तक होते हैं। मात्रावृत्त या मात्रिक छन्द में १२ मात्राओं से २८ मात्रा तक के पाद दिखलाई पडते हैं। उक्त दोनों प्रकार के छन्दों में चार–चार चरण या पाद होते हैं। इन्हीं चरणों के आधार पर सम, अर्धसम और विषम के रूप में पद्यों के तीन भेद हो जाते हैं। समवृत्त में चारों चरणों के गण समान रहते हैं। अर्धसमवृत्त में पहले और तीसरे, दूसरे और चौथे चरणों में गण समान होते हैं। विषमवृत्त में चारों चरणों के गण असमान या भिन्न–भिन्न रहते हैं। वर्णवृत्त पूर्णतः गणों से नियमबद्ध होते हैं, अतः इन्हें गणवृत्त भी कहते हैं। वसन्ततिलका, मालिनी, मन्दाक्रान्ता इत्यादि गणवृत्त है। आर्या, गीति आदि मात्रावृत्त है। मात्रावृत्तों में मात्राओं के संकलन के अतिरिक्त एक विशेष प्रकार के गणों का ध्यान रखना होता है। ये गण चार चार अक्षरों के होते हैं। इन्हें चतुष्कल गण कहते हैं।

संस्कृत छन्दशास्त्र में कालिदास–कृत *श्रुतबोध* लौकिक छन्दों का सर्वाधिक प्रचलित ग्रन्थ है। संस्कृत काव्यों में प्रयुक्त प्रचलित छन्दों का वर्णन इसकी विशेषता है। इसमें गणों के नाम तथा लक्षण का उल्लेख है, परन्तु गणपद्धति का उपयोग लक्षण –विन्यास के लिए नहीं किया गया है। लघुगुरु अक्षर–पद्धति ही इसमें प्रयुक्त है तथा लक्षण एवं लक्ष्य दोनों का वर्णन एक ही पद्य में किया गया है।

*श्रुतबोध*कार ने इसका संकेत किया है कि एक छन्द से दूसरा छन्द किसप्रकार उद्भूत हो जाता है। यथा, गुरुवर्ण के स्थान पर लघु के प्रयोग से इन्द्रवज्रा छन्द, उपेन्द्रवज्रा छन्द बन जाता है।

इन्द्रवज्रा तौ ज्गौग् । [5]
यस्यां त्रिषट्सप्तममक्षरं स्याद्ध्रस्वं सुजङ्घे नवमं च तद्वत्।
गत्या विलज्जीकृतहंसकान्ते! तामिन्द्रवज्रां ब्रुवते कवीन्द्राः।। [6]
तकाराभ्यां जकारेण युक्तं गुरुयुगेन च।
इन्द्रवज्राभिधं प्राहुर्वृत्तमेकादशाक्षरम्।। [7]
स्यादिन्द्रवज्रा यदि तौ जगौ गः [8]
यस्यां तकारद्वितयं जकारः प्रान्ते निधेयं गुरुवर्णयुग्मम्।
मात्राभिरष्टादशसम्मिता सा सैकादशार्णा जयतीन्द्रवज्रा।। [9]
उपेन्द्रवज्रा ज् तौ ज् गौ ग् । [10]

यदीन्द्रवज्राचरणेषु पूर्वे भवन्ति वर्णा लघवः सुवर्णे! ।
अमन्दमाद्यन्मदने तदानीमुपेन्द्रवज्रा कथिता कवीन्द्रैः।। [11]

जतजैर्गुरुयुग्मेन संसक्तैरुपलक्षितम् ।
वदन्त्युपेन्द्रवज्राख्यं वृत्तमेकादशाक्षरम् ।। [12]
उपेन्द्रवज्रा जतजास्ततो गौ [13]
उपेन्द्रवज्रा प्रथमे लघौ सा [14]

इन्द्रवज्रा	**त त ज ग ग**	ऽऽ। ऽऽ। ।ऽ। ऽऽ
उपेन्द्रवज्रा	**ज त ज ग ग**	।ऽ। ऽऽ। ।ऽ। ऽऽ

उपर्युक्त इन्द्रवज्रा और उपेन्द्रवज्रा के गण–लक्षण को देखने से ज्ञात होता है कि इन्द्रवज्रा का शुरुआती तगण उपेन्द्रवज्रा में जगण हो जाता है। परन्तु उक्त छन्दों का लघुगुरु–पद्धति से लक्षण विचारने पर इन्द्रवज्रा के शुरुआती गुरु वर्ण को लघुवर्ण करने से उपेन्द्रवज्रा छन्द का लक्षण बन जाता है।

इस दृष्टि से समानता रखने वाले छन्द एक साथ रखे गये हैं छन्दों के परस्पर सम्बन्ध पर इस दृष्टि से इस ग्रन्थ में प्रथमतया विचार का संकेत मिलता है। कवियों ने किस प्रकार नये छन्दों की उद्भावना की होगी, इसका संकेत भी श्रुतबोध के उक्त प्रकारक विवेचन में मिलता है। कवियों ने प्रस्तारविधि से कृत्रिम छन्दोवृद्धि नहीं की होगी, वरन् लय–साम्य के आधार पर लघुगुरु वर्णों के यत्किञ्चित् परिवर्तन द्वारा ही नवीन छन्दों की उद्भावना की होगी, यह श्रुतबोधकार कालिदास से संकेतित होता है।

क्षेमेन्द्र–कृत *सुवृत्ततिलक* लौकिक छन्दोग्रन्थ में दो छन्दों के पारस्परिक अन्तःसम्बन्ध को बतलाया गया है।

मन्दाक्रान्ता भवेन्मध्ये शालिनी पूरिताक्षरा ।
उपेन्द्रवज्रं वंशस्थं पर्यन्तेकाक्षरादिकम् ।। [15]

अर्थात् शालिनी छन्द के बीच में कुछ अक्षर जोडकर मन्दाक्रान्ता छन्द बनता है –

शालिनी	ऽऽऽऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ
मन्दाक्रान्ता	ऽऽऽ ऽ।। ।।। ऽऽ। ऽऽ। ऽऽ

शालिनी छन्द के चार अक्षरों के बाद पाँच लघु और एक गुरु जोड देने से मन्दाक्रान्ता छन्द बन जाता है। इसे उलट कर इस प्रकार भी कहा जा सकता है कि मन्दाक्रान्ता में पाँचवें अक्षर से दसवें अक्षर तक को लुप्त कर देने से शालिनी छन्द बनता है

इसी प्रकार उपेन्द्रवज्रा में अन्तिम अक्षर से पूर्व एक (लघु) वर्ण जोड देने से वंशस्थ नामक छन्द बन जाता है।

उपेन्द्रवज्रा	**ज त ज ग ग**	।ऽ। ऽऽ। ।ऽ। ऽऽ
वंशस्थ	**ज त ज र**	।ऽ। ऽऽ। ।ऽ। ऽ।ऽ

इस प्रकार *श्रुतबोध* एवं *सुवृत्ततिलक* छन्दोग्रन्थों में छन्दों के पारस्परिक संरचनात्मक पक्ष की ओर संकेत किया है इसी विषय को १९वीं शताब्दी के आचार्य मधुसूदन ओझा ने अपने ग्रन्थ छन्दःसमीक्षा में मर्मचिन्ता प्रकरण के अन्तर्गत विस्तार से विवेचित किया है। ध्यातव्य है कि अधिकतर छन्दःशास्त्रीय ग्रन्थों ने इस महत्त्वपूर्ण विषय पर गौणतया ही विचार किया है अथवा इसे उपेक्षित छोड दिया है। प्रस्तुत अध्ययन में पं. मधुसूदन ओझा कृत *छन्दःसमीक्षा* को आधार बनाकर छन्दों निरूपण की पारम्परिक प्रणाली के इसी दोष तथा उसके समाधान को रेखांकित करने का एक प्रयास किया जा रहा है। छन्दोमर्मचिन्ता द्विविध है– प्रथम दो वृत्तों की मर्मचिन्ता वृत्तद्वयमर्मचिन्ता है, द्वितीय दो पादों की मर्मचिन्ता पादद्वयमर्मचिन्ता है। समवृत्त में वृत्तद्वयमर्मचिन्ता एवं अर्धसमादि छन्दों में पादद्वयमर्मचिन्ता बताई गयी है। छन्दों के लक्षणों में ९ स्वल्पभेद के कारण एक छन्द दूसरा छन्द बन जाता है।

[4] श्रुतबोध २१
[5] पिङ्गलछन्दःसूत्र ६२१.
[6] श्रुतबोध २१
[7] सुवृत्ततिलक ११८.
[8] वृत्तरत्नाकर ३२.४१ तथा छन्दोमञ्जरी २८.
[9] वृत्तमुक्तावली ३.१३९
[10] पिङ्गलछन्दःसूत्र ६.२२
[11] श्रुतबोध २२
[12] सुवृत्ततिलक १.१८
[13] वृत्तरत्नाकर ३२९.
[14] छन्दोमञ्जरी २.४२
[15] सुवृत्ततिलक २४४.

(विषय विवेचन से पूर्व मधुसूदन ओझा द्वारा छन्दों को मापने के लिए उपयुक्त गणों कि सूची नीचे दी जा रही है–)

ग ऽ	म ऽऽऽ	मु ऽऽऽ ऽऽऽ	मा ऽऽऽ ऽऽऽ ऽऽऽ	मि ऽऽऽ ऽऽऽ ऽऽऽ ऽऽऽ	क्ष ऽऽ
ल ।	य ।ऽऽ	यु ।ऽऽ ।ऽऽ	या ।ऽऽ ।ऽऽ ।ऽऽ	यि ।ऽऽ ।ऽऽ ।ऽऽ ।ऽऽ	भ ऽ।।
क्ष ऽऽ	र ऽ।ऽ	रु ऽ।ऽ ऽ।ऽ	रा ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ	रि ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ	ज ।ऽ।
क ।ऽ	स ।।ऽ	सु ।।ऽ ।।ऽ	सा ।।ऽ ।।ऽ ।।ऽ	सि ।।ऽ ।।ऽ ।।ऽ ।।ऽ	स ।।ऽ
ख ऽ।	त ऽऽ।	तु ऽऽ। ऽऽ।	ता ऽऽ। ऽऽ। ऽऽ।	ति ऽऽ। ऽऽ। ऽऽ। ऽऽ।	
घ ।।	ज ।ऽ।	जु ।ऽ। ।ऽ।	जा ।ऽ। ।ऽ। ।ऽ।	जि ।ऽ। ।ऽ। ।ऽ। ।ऽ।	
	भ ऽ ।।	भु ऽ।। ऽ।।	भा ऽ।। ऽ।। ऽ।।	भि ऽ।। ऽ।। ऽ।। ऽ।।	
	न ।।।	नु ।।। ।।।	ना ।।। ।।। ।।।	नि ।।। ।।। ।।। ।।।	

१.पदसाम्यप्रकार– जिसमें पदों की समानता के कारण छन्दों का आदि, मध्यम अथवा अन्तिम भाग समान होता है।
कश्चित्कान्ता *विरहगुरुणा* **स्वाधिकारात् प्रमत्तः।** (मन्दाक्रान्ता)
कश्चित्कान्ता **स्वाधिकारात् प्रमत्तः।** (शालिनी)
तव कुसुमशरत्वं **शीतरश्मित्वमिन्दोः** (मालिनी)
कश्चित्कान्ता **शीतरश्मित्वमिन्दोः** (शालिनी)

१.१ अन्तिम पदसाम्यप्रकार– प्रतिपादं रुगपदमन्तिमं चन्द्रलेखापद्मस्रग्धरामन्दाक्रान्तानां मालिनीशालिन्योश्च। [16]

चन्द्रलेखा	ऽऽऽ।ऽऽऽ ऽ।ऽऽ।ऽऽ	मरगंगरुगः
पद्म	।।। ।।ऽ ऽऽऽ ऽऽ। ऽऽ। ऽऽ	
स्रग्धरा	ऽऽऽ ऽ।ऽ ऽ।। ।।। ।ऽ ऽ ।ऽऽ ।ऽऽ	क्षुयहसरुगः
मन्दाक्रान्ता	ऽऽऽ ऽ।। ।।। ऽ ऽ। ऽऽ। ऽऽ	क्षुनसरुगः
मालिनी	।।। ।।। ऽऽ ऽ ।ऽऽ ।ऽऽ	नुक्षंरुगः
शालिनी	ऽऽऽ ऽ ऽ। ऽऽ। ऽऽ	क्षुंरुगः

उक्त छन्दों के अन्तिम रुग (दो रगण, गुरु) पद समान है।

१.२ मध्यम पदसाम्यप्रकार– अथ लनसपदं मध्यमं स्रग्धराचित्ररेखाचलकेसरसुवदनानाम्। [17]

स्रग्धरा	ऽऽऽ ऽ।ऽऽ । ।।। ।।ऽ ऽ ।ऽऽ ।ऽऽ	क्षुयहसरुगः
चित्ररेखा	ऽऽऽऽ । ।।। ।।ऽ ऽ।ऽऽ।ऽऽ	क्षुंनुगंरुगः
चल	ऽऽऽऽ । ।।। ।।ऽ । ऽ।। ऽ।ऽ	क्षुहसजुगः
केसर	ऽऽऽऽ । ।।। ।।ऽ ऽऽ।ऽऽ।ऽ	क्षुंहसंतुगः
सुवदना	ऽऽऽ ऽ।ऽ ऽ । ।।। ।।ऽ ऽ ऽ।। ।ऽ	क्षुंयंहसतसः

उक्त छन्दों के मध्यम लनस (लघु,नगण,सगण) पद समान है।

१.३ आदि पदसाम्यप्रकार– अथ मगं पदमादिमं मन्दाक्रान्ता–चन्द्रलेखा–मदनललिता–हारिणीचलकेसराणां शालिन्याश्च । [18]

मन्दाक्रान्ता	ऽऽऽ ऽ ।। ।।। ऽ ऽ। ऽऽ। ऽऽ	क्षुनसरुगः
चन्द्रलेखा	ऽऽऽ ऽ ।ऽऽऽ।ऽऽ।ऽऽ	मरगंगरुगः
मदनललिता	ऽऽऽ ऽ ।। ।।। ऽऽऽ ।।। ऽ	क्षुंनसंतसः
हारिणी	ऽऽऽ ऽ ।। ।।। ऽऽऽ ।ऽऽ ।ऽ	क्षुंनसंतुगः
चल	ऽऽऽ ऽ ।। ।।। ।ऽ। ऽ।। ऽ।ऽ	क्षुहसजुगः
केसर	ऽऽऽ ऽ ।।।ऽऽऽ।ऽऽ।ऽ	क्षुंहसंतुगः
शालिनी	ऽऽऽ ऽ ऽ। ऽऽ। ऽऽ	क्षुंरुगः

उक्त छन्दों के आदि मग (मगण,गुरु) पद समान है।

२ सामान्यविशेषप्रकार – किन्हीं छन्दों के एक भाग (पूर्ववर्ती अथवा उत्तरवर्ती) में सामान्य नियम से समानता होने पर सामान्यप्रकार तथा उन्हीं छन्दों के सामान्य नियम के साथ कुछ विशेष नियम के योग से नवीन छन्द बन जाते हैं। ये नवीन छन्द विशेषप्रकार में सम्मलित होते हैं।

२.१ उत्तरतो रुगेण सामान्येऽपि पूर्वतो गमेन शालिनी, लनसगेन मालिनी। [19]
पाद के उत्तरवर्ती भाग में रुग (दो रगण, गुरु) के होने पर तथा पाद के पूर्ववर्ती भाग में गम (गुरु, मगण) के होने पर शालिनी छन्द तथा पाद के उत्तरवर्ती भाग में रुग (दो रगण, गुरु) के होने पर तथा पाद के पूर्ववर्ती भाग में लनसग (लघु,नगण,सगण,गुरु) होने पर मालिनी छन्द होता है।

शालिनी ऽऽऽ ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ
मालिनी ।।। ।।। ऽऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ

२.२ उत्तरतो गरुणा सामान्येऽपि पूर्वतो गमयेन ज्योत्स्ना, लनसगेन चन्द्रोद्योतः। [20]
पाद के उत्तरवर्ती भाग में गरु (गुरु,दो रगण) के होने पर तथा पाद के पूर्ववर्ती भाग में गमय (गुरु, मगण,यगण) के होने पर ज्योत्स्ना छन्द तथा पाद के उत्तरवर्ती भाग में गरु (गुरु,दो रगण) के होने पर तथा पाद के पूर्ववर्ती भाग में लनसग (लघु,नगण,सगण,गुरु) होने पर चन्द्रोद्योत छन्द होता है।

ज्योत्स्ना ऽ ऽऽऽ ।ऽऽ ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ
चन्द्रोद्योत । ।।। । ।ऽ ऽ ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ

२.३ उत्तरतो जुगेन सामान्येऽपि पूर्वतो गमयेन जया, लनसगेनोपमालिनी। [21]
पाद के उत्तरवर्ती भाग में जुग (दो रगण, गुरु) के होने पर तथा पाद के पूर्ववर्ती भाग में गमय (गुरु, मगण,यगण) के होने पर जया छन्द तथा पाद के उत्तरवर्ती भाग में जुग (दो रगण, गुरु) के होने पर तथा पाद के पूर्ववर्ती भाग में लनसग (लघु,नगण,सगण,गुरु) होने पर उपमालिनी छन्द होता है।

जया ऽ ऽऽऽ ।ऽऽ ।ऽ। ।ऽ। ऽ
उपमालिनी । ।।। । ।ऽऽ ।ऽ। ।ऽ। ऽ

२.४ पूर्वतो गमयेन सामान्येऽप्युत्तरतो जुगेन जया, गरुणा ज्योत्स्ना। [22]
पाद के पूर्ववर्ती भाग में गमय (गुरु,मगण, यगण) के होने पर तथा पाद के उत्तरवर्ती भाग में जुग (दो जगण, गुरु) के होने पर जया छन्द तथा पाद के पूर्ववर्ती भाग में गमय (गुरु,मगण, यगण) के होने पर तथा पाद के उत्तरवर्ती भाग में गरु (गुरु,दो रगण) होने पर ज्योत्स्ना छन्द होता है।

जया ऽ ऽऽऽ ।ऽऽ ।ऽ। ।ऽ। ऽ
ज्योत्स्ना ऽ ऽऽऽ ।ऽऽ ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ

[16] छन्दःसमीक्षा पृ.१९७
[17] छन्दःसमीक्षा पृ.१९७ यहाँ ध्यातव्य है कि मूलग्रन्थ में चित्ररेखा के स्थान पर चन्द्रलेखा पाठ है परन्तु चन्द्रलेखा का लक्षण उक्तानुसार घटित नहीं हो पाता है।
[18] वही
[19] वही
[20] छन्दःसमीक्षा पृ.१९७
[21] वही
[22] वही

२.५ पूर्वतो लनसगेन सामान्येऽप्युत्तरतो जुगेनोपमालिनी, रुगेण मालिनी, गरुणा चन्द्रोद्योतः। [23]

पाद के पूर्ववर्ती भाग में **लनस** (लघु,नगण, सगण) के होने पर तथा पाद के उत्तरवर्ती भाग में जुग (दो जगण, गुरु) के होने पर उपमालिनी छन्द तथा पाद के पूर्ववर्ती भाग में लनस (लघु,नगण, सगण) के होने पर तथा पाद के उत्तरवर्ती भाग में रुग (दो रगण,गुरु) होने पर मालिनी छन्द होता है। पाद के पूर्ववर्ती भाग में लनस (लघु,नगण, सगण) के होने पर तथा पाद के उत्तरवर्ती भाग में गरु (गुरु,दो रगण,) होने पर चन्द्रोद्योत छन्द होता है।

उपमालिनी	। ।।। ।।ऽ ऽ ।ऽ। ।ऽ। ऽ
मालिनी	।।। ।।। ऽऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ **नवनगवनखेलाश्याममध्याभिराभिः**
चन्द्रोद्योत	। ।।। ।।ऽ ऽ ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ

३. आदेशप्रकार – किसी छन्द के आदि, मध्य अथवा अन्त में रुगादि पदों के स्थान पर गभकादि का आदेश करना अथवा लोप करने से छन्दों के प्रकार को आदेशप्रकार में रखा गया है।

३.१ स्रग्धरान्त्यपदस्य रुगस्य स्थाने गभकादेशे सुवदना । [24]

स्रग्धरा के अन्त्यपद रुग के स्थान पर गभक का आदेश करने से सुवदना छन्द बन जाता है।

स्रग्धरा ऽऽऽ ऽ।ऽ ऽ। ।।। ।ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ (**प्राणाघातान्निवृत्तिः परधनहरणे** संयमः सत्यवाक्यं)

सुवदना ऽऽऽ ऽ।ऽ ऽ। ।।। ।ऽ ऽ ऽ।। ।ऽ (**यस्याः कर्णावतंसोत्पलरुचिजयिनी** दीर्घे च नयने)

३.२ स्रग्धरामध्यपदस्य नुगस्य लोपेऽथान्त्यस्य रुगस्य स्थाने जुगादेशे जया, तुगादेशे ज्योत्स्ना । [25]

स्रग्धरा के मध्यपद नुग का लोप करने तथा अन्त्य रुग के स्थान पर जुग का आदेश करने से जया छन्द बन जाता है। स्रग्धरा के मध्यपद नुग का लोप करने तथा अन्त्य रुग के स्थान पर तुग का आदेश करने से ज्योत्स्ना छन्द बन जाता है।

स्रग्धरा	ऽऽऽ ऽ।ऽ ऽ ।।। ।।। ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ	
जया	ऽऽऽ ऽ।ऽ ऽ	।ऽ। ।ऽ। ऽ
ज्योत्स्ना	ऽऽऽ ऽ।ऽ ऽ	ऽऽ। ऽऽ। ऽ

३.३ स्रग्धरादिपदस्य गमयस्य लोपे चन्द्रलेखा । [26]

स्रग्धरा के आदिपद गमय का लोप करने से चन्द्रलेखा छन्द बन जाता है।

स्रग्धरा ऽऽऽ ऽ।ऽ ऽ ।।। ।।। ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ प्राणाघातान्निवृत्तिः परधनहरणे संयमः सत्यवाक्यं

चन्द्रलेखा ।।। ।।। ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ परधनहरणे संयमः सत्यवाक्यं

इसी प्रकार चन्द्रलेखा, मन्दाक्रान्ता, शार्दूलविक्रीडित, शिखरिणी, वसन्ततिलका,इन्द्रवज्रा, उपेन्द्रवज्रा, वंशस्थ, स्वागता, रथोद्धता छन्दों को विभिन्न आदेश एवं लोप के द्वारा अन्य छन्दों के लक्षण बनाएं हैं।

४. द्वैगुण्यप्रकार – किसी छन्द के लक्षण को दो बार प्रयुक्त करने पर अन्य छन्द का लक्षण बन जाना ही द्वैगुण्यप्रकार है।

४.१ किः प्रमाणी, खिसमानी, वितानमन्यत्। प्रमाणीद्वैगुण्ये नाराचम्, समानीद्वैगुण्ये चञ्चला। चञ्चलान्सलोपे तु चामरः। [27]

कि वर्ण चार क (।ऽ) का बोध कराता है और चार लघु–गुरु से प्रमाणी छन्द का लक्षण बन जाता है। प्रमाणी को द्विगुण करने से नाराच छन्द बन जाता है।

प्रमाणी ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ (सुरद्रुमूलमण्डपे) को द्विगुण करने पर ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ (सुरद्रुमूलमण्डपे विचित्ररत्ननिर्मिते) नाराचम्

खि वर्ण चार ख (ऽ।) का बोध कराता है और चार गुरु–लघु से समानी छन्द का लक्षण बन जाता है। समानी को द्विगुण करने से चञ्चला छन्द बन जाता है।

समानी ऽ।ऽ।ऽ।ऽ (काशिकापुराधिनाथ) को द्विगुण करने पर ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ (काशिकापुराधिनाथकालभैरवं भजे हि) चञ्चला

वितान – समानी और प्रमाणी गुरु–लघु, लघु–गुरु के मेल से वितान के अनेक भेद बन जाते हैं।

यथा– १. ऽऽ ।। ऽऽ ।।

२. ।। ऽऽ ।। ऽऽ

३. ऽऽ ।ऽ ।ऽ ।ऽ

४. ऽ। ।ऽ ।। ऽऽ

५. यतिप्रकार – कई बार छन्द में यति भेद के कारण दूसरा छन्द बन जाता है।

निसश्चन्द्रवर्ता, तस्याः षष्ठेऽक्षरे यतौ माला, सप्तमे सरभा, अष्टमे मणिगुणनिकरः। [28]

नि वर्ण चार नगण (।।।) का बोध कराता है और स वर्ण सगण का द्योतक है इस (।।।।।।।।।।।।।ऽ) से चन्द्रवर्ता छन्द का लक्षण बन जाता है।

चन्द्रवर्ता ।।।।।।।।।।।।।ऽ नुनुसः (पटुजवपवनचलितजललहरी)

चन्द्रवर्ता के लक्षण में छठे अक्षर पर यति करने से माला छन्द बन जाता है–

माला ।।।।।।,।।।।।।।।ऽ नुंनुसः (**नवविकसित**कुवलयदलनयने)

चन्द्रवर्ता के लक्षण में सातवे अक्षर पर यति करने से शरभा छन्द बन जाता है–

शरभा ।।।।।।।,।।।।।।।ऽ (**विकसितकमल**सुरभिशुचि)

चन्द्रवर्ता के लक्षण में आठवे अक्षर पर यति करने से मणिगुणनिकर छन्द बन जाता है–

मणिगुणनिकर ।।।।।।।।,।।।।।।ऽ नुघंनुगः (**नरकरिपुरवतु** निखिलसुरगतिः)

६. विपर्यासप्रकार – किसी पद के पश्चात् पदविशेष के योग से किसी छन्द का लक्षण बनता है, परवर्ती प्रयुक्त पद को पूर्व में प्रयुक्त करने से विपर्यास प्रकार होता है।

सकपदाल्लसुपदे प्रमिताक्षरा तद्विपर्य्यासे द्रुतविलम्बितम् । [29]

यथा **सक** (सगण,लघु–गुरु) पद के पश्चात् **लसु** (लघु, दो सगण) पद के योग से प्रमिताक्षरा छन्द बनता है।

प्रमिताक्षरा	।।ऽ।ऽ ।।।ऽ।।ऽ	**प्रतिकूलतामुपगते हि विधौ**
द्रुतविलम्बित	।।।ऽ।।ऽ ।।ऽ।ऽ	**उपगते हि विधौ प्रतिकूलताम्**

इसका विपर्यास करने पर अर्थात् **लसु** (लघु, दो सगण) पद के पश्चात् **सक**(सगण,लघु–गुरु) पद के होने पर द्रुतविलम्बित छन्द बन जाता है।

---

[23] वही

[24] छन्दःसमीक्षा पृ. १९८

[25] वही

[26] वही

[27] वही, यहाँ ध्यातव्य है कि 'चञ्चलान्सलोपे तु चामरः' यह वाक्यांश घटित नहीं हो पाता है।

[28] छन्दःसमीक्षा पृ. १९८

[29] वही

७. **पादवैशेष्यप्रकार** – अर्धसमवृत्त में पादविशेष के प्रकार से छन्द का लक्षण बन जाता है।
यथा पुष्पिताग्रायां नलोत्तरं घरयस्यायुग्मत्वं युग्मत्वं च भरयस्य। [30]
जैसे पुष्पिताग्रा छन्द के **नल** (नगण,लघु) के पश्चात् **घरय** (दो लघु, रगण, यगण) होने से विषम (अयुग्म) चरण बनते हैं तथा पुष्पिताग्रा छन्द के **नल** (नगण,लघु) के पश्चात् **भरय** (भगण,रगण,यगण) होने से सम (युग्म) चरण बनते हैं।
पुष्पिताग्रा ।।।। ।ऽ।ऽ।ऽऽ विषम (अयुग्म) चरण
।।।। ऽ।।ऽ।ऽ।ऽऽ सम (युग्म) चरण

८. अक्षरविनिमयप्रकार – जब किसी छन्द के लक्षण में अक्षर के बदलने से छन्द भी बदल जाता है तो वह अक्षरविनिमयप्रकार माना जाता है।
८.१ लौकिक छन्द सपदिका के भेद लक्ष्मी छन्द के प्रथमाक्षर को अन्त में रखने पर भुजङ्ग छन्द बन जाता है। भुजङ्ग छन्द के प्रथमाक्षर को अन्त में रखने पर आभार छन्द बन जाता है। आभार छन्द के प्रथमाक्षर को अन्त में रखने पर लक्ष्मी छन्द बन जाता है।

लक्ष्मी	ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ ऽ।ऽ	रिरिः
भुजङ्ग	।ऽऽ ।ऽऽ ।ऽऽ ।ऽऽ ।ऽऽ ।ऽऽ ।ऽऽ ।ऽऽ	यियिः
आभार	ऽऽ। ऽऽ। ऽऽ। ऽऽ। ऽऽ। ऽऽ। ऽऽ। ऽऽ।	तितिः

८.२ लक्ष्मी छन्द के प्रथमाक्षरद्वय को अन्त में रखने पर आभार छन्द बन जाता है। आभार छन्द के प्रथमाक्षरद्वय को अन्त में रखने पर भुजङ्ग छन्द बन जाता है। भुजङ्ग छन्द के प्रथमाक्षरद्वय को अन्त में रखने पर लक्ष्मी छन्द बन जाता है।

८.३ लक्ष्मी छन्द के अन्त्याक्षर को आदि में रखने पर आभार छन्द बन जाता है। आभार छन्द के अन्त्याक्षर को आदि में रखने पर भुजङ्ग छन्द बन जाता है। भुजङ्ग छन्द के अन्त्याक्षर को आदि में रखने पर लक्ष्मी छन्द बन जाता है।
इसी प्रकार चन्द्रपदी, किरीट, दुर्म्मिला की भी व्याख्या करनी चाहिए।

९. अक्षरयोगायोगविचार – किसी छन्द में एक अक्षर के योग से अथवा वियोग से एक छन्द दूसरे छन्द में परिणत हो जाता है।
९.१ भाभिगो मदिरा, भाभिक्षो मालती, भाभिखश्चित्रपदा, भिभिः किरीटम्। मदिरादीनामादौ लयोगे मल्लिका, माधवी, चन्द्रपदी, सहजा, घयोगे तु दुर्म्मिला, कमला, सुधा, ललिता। [31]

मदिरा ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ आदि में लयोग ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ मल्लिका
मालती ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽऽ आदि में लयोग ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽऽ माधवी
चित्रपदा ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ। आदि में लयोग ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ। चन्द्रपदी
किरीट ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।। आदि में लयोग ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ। सहजा
मदिरा ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ आदि में घयोग ।।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ दुर्म्मिला
मालती ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽऽ आदि में घयोग ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽऽ कमला
चित्रपदा ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ।ऽ। आदि में घयोग ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ। सुधा
किरीट ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।। आदि में घयोग ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ।।ऽ। ललिता

भाभिगो मदिरा	जाजिको मल्लिका	सिसिर्दुर्म्मिला
भाभिक्षो मालती	जाजियो माधवी	सिसिगः कमला
भाभिखश्चित्रपदा	जिजिश्चन्द्रपदी	सिसिलः सुधा
भिभिः किरीटम्	जिजिलः सहजा	सिसिघो ललिता

ल भाभिगो मल्लिका	ल जाजिको दुर्म्मिला	ग सासिर्मदिरा
ल भाभिक्षो माधवी	ल जाजियो कमला	ग सासिगो मालती
ल भाभिखश्चन्द्रपदी	ल जिजि सुधा	ग सासिलश्चन्द्रपदा
ल भिभिः सहजा	ल जिजिलः ललिता	ग सासिघः किरीटः

घ भाभिगो दुर्म्मिला	ख जाजिको मदिरा	क सासिर्मल्लिका
घ भाभिक्षोः कमला	ख जाजियो मालती	क सासिगो माधवी
घ भाभिखः सुधा	ख जिजिश्चित्रपदा	क सासिलश्चन्द्रपदी
घ भिभिः ललिता	ख जिजिलः किरिटः	क सासिघः सहजा

उपसंहार – इस प्रकार छन्दों के पारस्परिक अन्तःसम्बन्ध को जानने के लिए छन्दों के लक्षण लघु–गुरु पद्धति से विचारने का सर्वप्रथम कार्य *श्रुतबोध* में किया गया है उसके पश्चात् *सुवृत्ततिलक* में भी कुछ संकेत प्राप्त होता है, परन्तु कालान्तर में अन्य छन्दशास्त्रीय ग्रन्थों में इस विषय पर प्रायः विचार नहीं किया गया है। पं. मधुसूदन ओझा ने अपने *छन्दःसमीक्षा* ग्रन्थ में मर्मचिन्ता शीर्षक के अन्तर्गत इस विषय का विस्तृत विमर्श किया है। आचार्य ने नौ प्रकारों से इसको समझाने का प्रयास किया है। जिनमें पदों की समानता को पदसाम्यप्रकार, सामान्यविशेषप्रकार, आदेशप्रकार, द्वैगुण्यप्रकार,यतिप्रकार, विपर्यासप्रकार, पादवैशेष्यप्रकार, अक्षरविनिमयप्रकार, अक्षरयोगायोगविचार पर दृष्टिपात करते हुए लिखते है '**इत्थमितरेषामपि यथायथमूहनीयम्**' अर्थात् इस प्रकार अन्य छन्दों के लक्षणों का विश्लेषण कर तत्तत् छन्दों के पारस्परिक अन्तःसम्बन्ध को उजागर करना चाहिए। इस प्रकार *छन्दःसमीक्षा* ग्रन्थ *श्रुतबोध* तथा *सुवृत्ततिलक* की परम्परा, जो अधिक वैज्ञानिक तथा उपादेय है, को ही आगे बढाने का कार्य करता है। इस विवेचन से स्पष्ट है कि *श्रुतबोध* से लेकर छन्दःसमीक्षा तक दृष्टिगोचर होने वाली छन्दोलक्षण प्रणाली में ही लाघव है, इसके अतिरिक्त जो मार्ग है उसमें बहुत अधिक गौरव है। गौरवदोष सभी शास्त्रों में हेय है। वस्तुतः गणीय व्यवस्था से छन्दोलक्षण करने वाले आचार्य की ऐसी विवशता ही होती है कि वह प्रत्येक छन्द का लक्षण पृथक्शः उपस्थापित करे। वह चाहकर भी तब तक उक्त लघु मार्ग का वरण नहीं कर सकता, जब तक कि वह गणीय मार्ग को किसी न किसी सीमा तक न छोड़े। इससे छन्दोलक्षण निरूपण की दोनों सरणियों की सीमाएँ और सामर्थ्य सामने आ जाते हैं।

सन्दर्भ–सूची

1. सुरजनदास स्वामी (संपा. अनु.) मधुसूदन ओझा कृत *छन्दःसमीक्षा*, राजस्थान संस्कृत अकादमी,जयपुर १९९१
2. धरानन्द शास्त्री (संपा. अनु.)(पु.) केदारभट्ट विरचित *वृत्तरत्नाकर*, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली १९९९
3. परमेश्वरदीन पाण्डेय (संपा. अनु.) गंगादास कृत *छन्दोमञ्जरी*, कृष्णदास अकादमी,१९८७
4. दुर्गाप्रसाद एवं काशीनाथ पाण्डुरंग परब वासुदेव लक्ष्मण शास्त्री पणशीकर (संपा) क्षेमेन्द्र कृत *सुवृत्ततिलक*, काव्यमाला द्वितीय गुच्छक, चौखम्बा भारती अकादमी, वाराणसी,१९८७

[30] वही
[31] छन्दःसमीक्षा पृ. १९९